पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

2018 का दिवानी विविध क्षेत्राधिकार संख्या 1638

==========

1. कामिनी देवी, पत्नी- दिनेश सिंह

2. दिनेश सिंह, पुत्र- स्वर्गीय रामचंद्र सिंह, दोनों निवासी-ग्राम- अथरी रामपुर, थाना रुननीसैदपुर, जिला- सीतामढ़ी वर्तमान निवास ग्राम- सहबाजपुर, थाना अहियापुर, जिला- मुज़फ़्फ़रपुर

3. राम काली देवी, पत्नी-श्यामनंदन सिंह, निवासी-ग्राम- नरमा, थाना- हथोरी, जिला- मुज़फ़्फ़रपुर, वर्तमान निवास ग्राम- सहबाजपुर, थाना अहियापुर, जिला-मुज़फ़्फ़रपुर

.... याचिकाकर्तागण

बनाम

1. राघवेन्द्र शाही उर्फ राघवेन्द्र प्रसाद शाही, पुत्र-स्वर्गीय धनुषा लाल शाही , निवासी-ग्राम- सहबाजपुर सलेम, डाकघर-भिखनपुर कोठी, थाना- अहियापुर, जिला- मुज़फ़्फ़रपुर

2. मुस्मात बच्ची देवी, पत्नी- स्वर्गीय रत्नेश्वर चौधरी, निवासी-ग्राम- सहबाजपुर, डाकघर- भिखनपुर कोठी, थाना- अहियापुर, जिला- मुज़फ़्फ़रपुर

3. राज किशोर सिंह, पुत्र-स्वर्गीय काशी सिंह

4. डॉ. अवधेश सिंह, पुत्र-स्वर्गीय काशी सिंह, उत्तरदाता संख्या 3 और 4 निवासी-ग्राम और डाकघर-नरमा, थाना-हथौरी, जिला-मुज़फ़्फ़रपुर

5. जानकी देवी, पत्नी-रामसंजीवन सिंह, निवासी- ग्राम- मोरसंद, डाकघर- मननपुर, थाना- रुन्निसैदपुर, जिला-सीतामढ़ी

6. ललिता देवी, पत्नी-सीताराम सिंह

7.1. आश नारायण सिंह, पुत्र-शत्रुघ्न सिंह, निवासी-ग्राम और डाकघर - चाहुतान, थाना - औराई, जिला- मुजफ्फरपुर।

7.2. बिमल कुमार सिंह, पुत्र-शत्रुघ्न सिंह, निवासी-ग्राम और डाकघर- चाहुतान, थाना- औराई, जिला-- मुजफ्फरपुर।

8. प्रभु सिंह, पुत्र-स्वर्गीय तपेश्वर सिंह

9.1. पिंकी देवी, पत्नी-स्वर्गीय राम किशोर सिंह, निवासी- ग्राम और डाकघर- नरमा, थाना- हथौरी, जिला- मुजफ्फरपुर।

9.2. दीपक कुमार सिंह, पुत्र-स्वर्गीय राम किशोर सिंह, निवासी-ग्राम और डाकघर- नरमा, थाना- हथौरी, जिला- मुजफ्फरपुर।

10.1. टुनटुन कुमार सिंह, पुत्र -स्वर्गीय चंद्र किशोर सिंह, निवासी-ग्राम- मोरसंद, थाना -रुन्नी सैदपुर, जिला- सीतामढ़ी

10.2. मनोज कुमार सिंह, पुत्र -स्वर्गीय चंद्र किशोर सिंह, निवासी-ग्राम-मोरसंद , थाना- रून्नी सैदपुर, जिला- सीतामढ़ी

10.3. सरोज कुमार सिंह, निवासी- ग्राम मोरसंद, थाना - रुन्नी सैदपुर, जिला- सीतामढी।

11. राम विनय सिंह, पुत्र-स्वर्गीय रामशीष सिंह उत्तरदाता 10 और 11 निवासी- ग्राम- मोरसंद, डाकघर मननपुर, थाना रुन्नीसैदपुर, जिला-सीतामढ़ी

12. धर्मशिला देवी, पत्नी-भोगेंद्र शाही, निवासी- ग्राम- शाही मीनापुर, थाना औराई, जिला- मुज़फ़्फ़रपुर।

13. उषा देवी, पत्नी-राघवेन्द्र सिंह, निवासी- ग्राम और डाकघर– अठारी, थाना रुननी सैदपुर, जिला-सीतामढ़ी

.. प्रतिवादीगण

==========

उपस्थिति :

याचिकाकर्ता/ओं के लिए	:	श्री वैदेही रमन प्रसाद सिंह,अधिवक्ता
प्रत्यर्थी संख्या 1 के लिए	:	श्री के. एन. चौबे, वरिष्ठ अधिवक्ता
		श्री दिनेश्वर पांडे, अधिवक्ता
		श्री अशोक कुमार गर्ग, अधिवक्ता

		श्री कुमार कार्तिकेय, अधिवक्ता
प्रत्यर्थी संख्या 2 के लिए	:	श्री सुनील कुमार वर्मा, अधिवक्ता
		श्री सुमन कुमार, अधिवक्ता
		श्री अनीश कुमार, अधिवक्ता
		सुश्री अंजलि सिंह, अधिवक्ता
		श्री अमरेश कुमार मिश्रा, अधिवक्ता

==========

अधिनियम/धाराएं/नियम:

- *आदेश 21 नियम 97 से 106 सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 151 के साथ*
- *संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम, 1882 की धाराएं 41, 52*

संदर्भित मामले:

- *रामजनम अहीर एवं अन्य बनाम बेयास सिंह एवं अन्य, एआईआर 1958 पैट 537 में रिपोर्ट किया गया*
- *शमशेर चंद बनाम बख्शी मेहर चंद व अन्य, एआईआर (34) 1947 लाहौर 147 में रिपोर्ट किया गया*
- *सेतुमाधव अय्यर बनाम बच्चा बीबी एवं अन्य, एआईआर 1928 मैड 778 में रिपोर्ट किया गया*
- *बैंगलोर विकास प्राधिकरण बनाम एन. नंजप्पा एवं अन्य, (2022) 18 एससीसी 156 में रिपोर्ट किया गया*
- *सिल्वरलाइन फोरम प्राइवेट लिमिटेड बनाम राजीव ट्रस्ट एवं अन्य, एआईआर 1998 एससी 1754 में रिपोर्ट किया गया*
- *धीरा मिश्रा @ धीरा देवी एवं अन्य। बनाम मोहम्मद लईक अहमद एवं अन्य। (सिविल विविध संख्या 2019 का 26) दिनांक 06.02.2024 को निर्णय लिया गया*
- *कोर्ट ऑफ वार्ड्स बनाम महाराजा कुमार रामपुत सिंह), (1871-72)14 एमआईए 605, (1872) एससीसी ऑनलाइन पीसी 16 में भी रिपोर्ट किया गया*
- *जय सिंह एवं अन्य बनाम दिल्ली नगर निगम एवं अन्य (2010) 9 एससीसी 385 में रिपोर्ट किया गया*

याचिका - अवर-न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश को रद्द करने के लिए दायर की गई, जिसके तहत निष्पादन अदालत ने याचिकाकर्ताओं द्वारा आदेश 21 नियम 97 आर/डब्ल्यू धारा 151 ऑफ सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के तहत निष्पादन मामले में हस्तक्षेपकर्ता/निर्णय देनदार के रूप में उन्हें पक्षकार बनाने के लिए दायर आवेदन को खारिज कर दिया।

निर्णय- *याचिकाकर्ता, जो कि प्रचलित मुकदमे के दौरान स्थानांतरित किए गए हैं, उनके पास निष्पादन प्रक्रिया का विरोध करने का कोई अधिकार नहीं है। एक बार जब यह स्वीकार किया जाता है कि निष्पादन प्रक्रिया का विरोध करने वाला व्यक्ति* ***pendente lite*** *में स्थानांतरित व्यक्ति है, तो यह आवश्यक नहीं है कि यह सवाल उठाया जाए कि वह संपत्ति खरीदते समय मुकदमे के बारे में अनजान था। (पैरा 12)*

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत इस न्यायालय का दायरा और अधिकार क्षेत्र सीमित है और इसका प्रयोग संयम से किया जाना चाहिए तथा इसका उपयोग न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा अपने अधिकार क्षेत्र की सीमाओं के भीतर कार्य करने वाली सभी त्रुटियों को सुधारने के लिए नहीं किया जा सकता है। वर्तमान मामले में, अवर-न्यायाधीश द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में अधिकार क्षेत्र की कोई त्रुटि प्रतीत नहीं होती है। यह एक सुविचारित और तर्कपूर्ण आदेश है तथा याचिकाकर्ताओं के प्रत्येक तर्क को निष्पादन न्यायालय द्वारा रिकॉर्ड किया गया है और उसे नकार दिया गया है। जब तक अधिकार क्षेत्र में कोई कमी या अधिकता या कमी न हो, इस न्यायालय के लिए ऐसे आदेशों में हस्तक्षेप करने का कोई अवसर नहीं है। (पैरा 13)

याचिका खारिज की जाती है। *(पैरा 15)*

==========

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय आदेश

==========

कोरमः माननीय न्यायमूर्ति श्री अरुण कुमार झा
कैव जजमेंट

दिनांक-07-01-2025

वर्तमान याचिका भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत 2007 के निष्पादन वाद संख्या 1 में विद्वान अवर-न्यायाधीश -**I**, मुज़फ़्फ़रपुर पूर्वी द्वारा पारित दिनांक 16.08.2018 के आदेश को रद्द करने के लिए दायर की गई है, जिसके तहत और जिसके अंतर्गत विद्वान निष्पादन अदालत ने दिवानी प्रक्रिया संहिता, 1908 (संक्षेप में 'कोड') के आदेश 21 नियम 97 के साथ धारा 151 के तहत याचिककर्ताओं द्वारा निष्पादन मामले में हस्तक्षेपकर्ता/निर्णय देनदार के रूप में उन्हे पक्षकार बनाने के लिए दायर आवेदन को खारिज कर दिया था।

02. संक्षेप में कहा जाए तो वर्तमान याचिका का तथ्य यह हैं कि एक नेवाज़ी लाल शाही ने मुज़फ़्फ़रपुर के विद्वान अवर-न्यायाधीश -**I**, की अदालत में भूमि विभाजन वाद संख्या 75/1964, मुक़दमे की भूमि में आधे हिस्से के विभाजन के लिए दायर किया था, जिसमें धनुखा लाल शाही की पत्नी धनुखा लाल शाही और राघवेंद्र शाही (धनुखा लाल शाही के बेटे) को प्रतिवादी के रूप में शामिल किया गया था। वर्तमान याचिका में राघवेंद्र शाही उत्तरदाता संख्या 1 है। मुकदमे की भूमि का हिस्सा दोनों पक्षों द्वारा अलग-अलग व्यक्तियों को हस्तांतरित किया गया था और उन्हें मुकदमे में पक्षकार के रूप में शामिल किया गया था। विभाजन वाद संख्या 75/1964 को 16.09.1965 पर *एकपक्षीय* घोषित किया गया था। अधिवक्ता आयुक्त ने मुकदमा भूमि के विभाजन को प्रभावी बनाने के लिए वर्ष 1967 में मुकदमे में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। रिपोर्ट पर फैसले के देनदारों ने आपत्ति जताई थी लेकिन आपत्ति को खारिज कर दिया गया था। अंतिम डिक्री के खिलाफ स्वत्व अपील संख्या 85/1975 दायर की गई थी और दिनांक 26.11.1975 के निर्णय और आदेश द्वारा, मामले को इस निर्देश के साथ निचली अदालत में भेज दिया गया था कि अधिवक्ता आयुक्त को निर्णय देनदारों से *'रायबंदी' और 'पट्टीबंदी'* पर आपत्तियां आमंत्रित करने के लिए फिर से निर्देश दिया जाए। डिक्री-धारक ने विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय के फैसले और डिक्री के खिलाफ द्वितीय अपील संख्या 63/1976 दायर की। इस बीच, नेवाजी

लाल शाही की बेटी और विभाजन के मुकदमे में पक्षकारों में से एक, बच्ची देवी ने खेसरा संख्या 764 की एक कटठा भूमि अपनी बेटी उर्मिला देवी को 02.03.1983 पर हस्तांतरित कर दी और उसे उसपर कब्जा दिला दिया । द्वितीय अपील संख्या 63/1976 में, इस न्यायालय ने विद्वान निचली अदालत को नए सिरे से एक अधिवक्ता आयुक्त नियुक्त करने का निर्देश दिया, इस निर्देश के साथ कि अधिवक्ता आयुक्त यह सुनिश्चित करेगा कि वादी/प्रतिवादियों द्वारा पहले से ही तीसरे पक्ष को बेची गई संपत्ति को बरकरार रखा जाए अपने-अपने शेयरों में। 1976 की दूसरी अपील संख्या 63/1976 को अंततः अधिवक्ता आयुक्त की रिपोर्ट में संशोधन के साथ दिनांक 22.04.1985 के आदेश द्वारा तय किया गया था कि प्लॉट संख्या 1, 24, 26, 54 और 56 को दक्षिण से उत्तर तक का एक नया विभाजन बनाया जाना चाहिए और पक्षों को आवंटित क्षेत्र और सघनता को बनाए रखा जाना चाहिए। बच्ची देवी ने प्लॉट संख्या 764 की 03 कट्ठा भूमि अपनी दूसरी बेटी अनीता देवी को उपहार दिया और उसे उसपर कब्जामें दे 07.06.1994 को बच्ची- देवी ने सहबाजपुर गाँव में स्थित खेसरा संख्या 268 की एक कट्टा भूमि, याचिकाकर्ता संख्या 3, राम काली देवी को हस्तांतरित कर दी और उसे उसपर कब्जा दे दिया। राम काली देवी ने अपने द्वारा खरीदी गई जमीन पर एक पक्का घर बनाया और वह उसमें अपने परिवार के साथ रह रही हैं। अधिवक्ता आयुक्त ने अपनी आगे की रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिस पर फैसले के देनदार ने आपत्ति जताई और विद्वान ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित 29.04.1999 के आदेश के अनुसार, आपत्ति को खारिज कर दिया गया और अधिवक्ता आयुक्त की 03.09.1996 की रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया गया। इस बीच, अनीता देवी ने प्लॉट संख्या-764 की 06 डिसमिल (1760 वर्ग फुट) भूमि दिनेश सिंह, याचिकाकर्ता संख्या 2 को 28.12.1996 को एक बिक्री विलेख के माध्यम से हस्तांतरित की। उर्मिला देवी ने खेसरा सं. 764 की 686 वर्गफीट (1.56 डिसमिल) भूमि, याचिकाकर्ता सं. 1 कामिनी देवी को 19.06.1998 एक बिक्री विलेख के माध्यम से जमीन हस्तांतरित की और उसे उसी के कब्जे में दे दिया। दिनेश सिंह ने 28.12.1996 को अपने नाम से खरीदी गई 06 डिसमिल जमीन के लिए 15.06.1999 को अपनी पत्नी कामिनी देवी के नाम समर्पण विलेख निष्पादित किया। कामिनी देवी और दिनेश सिंह ने अपने द्वारा खरीदी गई जमीन पर एक *पक्का* आवासीय घर भी बनाया और वे अपने परिवार के साथ उसमें रह रहे हैं। 22.06.1999 को मुकदमे में अंतिम डिक्री तैयार की गई थी, जिसे निर्णय देनदार ने दिवानी पुनरीक्षण संख्या 930/1999 में इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी थी। दिवानी पुनरीक्षण मामले को 01.09.1999 दिनांकित आदेश के माध्यम से खारिज कर दिया गया। इसके बाद, निर्णय

देनदार ने सिविल पुनरीक्षण संख्या 930/1999 में पारित आदेश को चुनौती देते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष एस. एल. पी. संख्या 15756/1999 दायर किया, जिसे 01.03.2000 को खारिज कर दिया गया था। अंतिम डिक्री के निष्पादन के लिए प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा निष्पादन मामला संख्या 1/2007 दायर किया गया था। याचिकाकर्ता संख्या 1 और 2 ने, 20.01.2018 को मामले में हस्तक्षेपकर्ता/निर्णय देनदार के रूप में उन्हें शामिल करने के लिए निष्पादन मामले में एक आवेदन दायर किया। इसी तरह, याचिकाकर्ता संख्या 3 ने भी 20.01.2018 को एक हस्तक्षेपकर्ता / निर्णय देनदार के रूप में शामिल करने के लिए निष्पादन मामले में एक आवेदन दायर किया। विद्वान अवर-न्यायाधीश -**I**, पूर्वी मुज़फ़्फ़रपुर ने दिनांक 16.08.2018 के आदेश के माध्यम से याचिकाकर्ताओं द्वारा दायर याचिकाओं को खारिज कर दिया, जिसे इस अदालत के समक्ष चुनौती दी गई है।

03. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता , श्री वैदेही रमन प्रसाद सिंह ने दलील दिया कि आक्षेपित आदेश टिकाऊ नहीं है और इसके लिए इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप की आवश्यकता है। मालिक और सह-हिस्सेदार द्वारा निष्पादित बिक्री-विलेखों के बारे में डिक्री-धारक की पूरी जानकारी के बावजूद याचिकाकर्ताओं को निष्पादन मामले में पक्षकार नहीं बनाया गया था। याचिकाकर्ताओं ने 20 साल पहले अपनी खरीदी गई भूमि पर इमारतों का निर्माण किया है और भूमि का उत्परिवर्तन भी उनके पक्ष में किया गया है, लेकिन अधिवक्ता आयुक्त ने घटनास्थल का दौरा किए बिना *पट्टीबंदी* तैयार की और प्रतिवादी संख्या 1 के लिए अलग *पट्टी* बनाई और उसे निष्पादन न्यायालय द्वारा स्वीकार कर लिया गया और कब्जे के वितरण का आदेश पारित कर दिया गया है। याचिकाकर्ताओं को विभाजन के मुकदमे या निष्पादन कार्यवाही में न तो पक्षकार बनाया गया था, हालांकि डिक्री धारक को अपने सह-हिस्सेदार द्वारा याचिकाकर्ताओं को संपत्तियों के हस्तांतरण की जानकारी हमेशा से थी। श्री सिंह ने आगे कहा कि याचिकाकर्ता संख्या 1 और 2 के विक्रेता संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम, 1882 (संक्षेप में 'अधिनियम') की धारा 41 के तहत याचिकाकर्ता संख्या 1 और 2 द्वारा खरीदी गई भूमि के प्रत्यक्ष मालिक थे। याचिकाकर्ताओं ने अपने विक्रेताओं से सद्भावनापूर्वक भूमि खरीदी थी, जिन्होंने वैध प्रतिफल के लिए भूमि हस्तांतरित की। याचिकाकर्ताओं ने यह सुनिश्चित करने के लिए उचित ध्यान रखा था कि उनके विक्रेताओं के पास अलगाव करने का अधिकार है और उन्होंने अच्छी भावना से जमीन खरीदी है। श्री सिंह ने दोहराया कि याचिकाकर्ताओं ने उनके द्वारा खरीदी गई भूमि

पर अपने पक्के आवासीय घरों का निर्माण किया है और वे पिछले 25-30 वर्षों से इसमें रह रहे हैं और उन्हें आकस्मिक तरीके से बेदखल नहीं किया जा सकता है। विद्वान निष्पादन न्यायालय निर्णय देनदारों की आपत्ति का निर्णय विवेकपूर्ण तरीके से करने के लिए कर्तव्यबद्ध था और केवल इस आधार पर उनकी आपत्ति को दरकिनार नहीं कर सकता था कि याचिकाकर्ता खरीदार हैं। इसके अलावा, 1976 की द्वितीय अपील संख्या 63/1976 में पारित दिनांक 18.05.1984 के आदेश के आलोक में, स्वामित्व मुकदमे में पक्षों द्वारा तीसरे पक्ष को हस्तांतरित की गई भूमि को हस्तांतरणकर्ताओं के हिस्से में दी जानी चाहिए थी, लेकिन अधिवक्ता आयुक्त ने इस न्यायालय के आदेशों के खिलाफ पट्टीबंदी तैयार की, जिससे उन याचिकाकर्ताओं को बहुत कठिनाई का कारण होगी, जो मुकदमे में पक्षकारों से वास्तविक हस्तांतरणकर्ता हैं। यहां तक कि प्रतिवादी संख्या 1 ने प्रतिवादी संख्या 2 के हिस्से को चार बिक्री विलेखों दिनांक 04.03.2020, 07.08.2020, 08.12.2020 और 04.07.2021 के माध्यम से तीसरे पक्ष को हस्तांतरित कर दिया है। जिन्हें प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा क्रमशः निष्पादित किया गया है।1. यह इस तथ्य को पुष्ट करता है कि याचिकाकर्ताओं द्वारा खरीदी गई भूमि को उनके हस्तांतरणकर्ताओं के हिस्से में दिया जाना चाहिए था और दूसरे पक्ष को याचिकाकर्ताओं के विक्रेताओं के हिस्से से भूमि का आवंटन के क्षतिपूर्ति की जा सकती थी।इन तथ्यों और परिस्थितियों में, याचिकाकर्ताओं के बिक्री विलेख न तो अमान्य हैं और न ही योग्य हैं और याचिकाकर्ताओं को निष्पादन मामले में सुनवाई का मौका दिया जाना चाहिए था। श्री सिंह ने आगे कहा कि दूसरी अपील में पारित इस न्यायालय के आदेशों के अनुपालन के लिए, अधिवक्ता आयुक्त द्वारा 03.09.1996 को रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी और इसकी पुष्टि 29.04.1999 को की गई थी और बिक्री विलेख 07.06.1994, 28.12.1996 और 19.06.1998 पर निष्पादित किए गए हैं और ये तीन बिक्री विलेख की द्वितीय अपील संख्या 63/1976 में पारित इस न्यायालय के आदेशों द्वारा सुरक्षित होंगे।

04. श्री सिंह ने अपनी प्रस्तुति के समर्थन में कई फैसलों का हवाला दिया । श्री सिंह ने सबसे पहले **रामजन्म अहीर एवं अन्य बनाम ब्यास सिंह और अन्य**, के मामले में इस अदालत की एकल न्यायाधीश पीठ के फैसले का हवाला दिया जो **ए. आई. आर. 1958, पटना 537** में रिपोर्ट कि गई थी जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि धारा 41 का सही अर्थ और व्याख्या यह है कि ऐसा व्यक्ति जो संपत्ति का प्रत्यक्ष मालिक है, वह ऐसी संपत्ति में रुचि रखने वाले व्यक्ति की स्पष्ट या निहित सहमति के साथ संपत्ति का

प्रत्यक्ष मालिक होना चाहिए, और ऐसे प्रत्यक्ष मालिक द्वारा हस्तांतरण के लिए वास्तविक मालिक की सहमति की आवश्यकता नहीं है; और यदि हस्तांतरणकर्ता ऐसे प्रत्यक्षमालिक से हस्तांतरण लेता है तब वहअधिनियम की धारा 41 के प्रावधान के तहत संरक्षित होता है, केवल तभी जब उसके द्वारा यह साबित किया जाता है कि उसने यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक सावधानी बरतने के बाद कि हस्तांतरणकर्ता के पास स्थानांतरण करने की शक्ति थी, सद्भावना से काम किया था। श्री सिंह ने आगे **शमशेर चंद बनाम बख्शी मेहर चंद और अन्य**, के मामले में लाहौर उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ के फैसले का हवाला दिया **जो ए आई आर (34) 1947 लाहौर 147** में रिपोर्ट किए गया था , जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अधिनियम की धारा 41 के तहत अचल संपत्ति में वास्तविक मालिक को अपने अधिकारों से वंचित करने के लिए, यह स्थापित किया जाना चाहिए कि उसने उक्त संपत्ति के मालिक के रूप में अपना प्रतिनिधित्व करने के लिए किसी अन्य व्यक्ति को अपनी सहमति व्यक्त या निहित की थी। यह सहमति शब्द या आचरण द्वारा हो सकती है। श्री सिंह ने प्रस्तुत किया कि डिक्री-धारक/प्रतिवादी संख्या 1 को स्थानांतरण के बारे में हमेशा से पता था और वास्तव में, इसे स्वीकार कर लिया था । इसके अलावा, यह एक संयुक्त पारिवारिक संपत्ति थी और दोनों पक्षों ने संयुक्त स्टॉक की भूमि हस्तांतरित की है और याचिकाकर्ताओं को मुकदमा संपत्ति के हस्तांतरण के लिए डिक्री धारक की निहित सहमति थी । श्री सिंह ने इसके बाद **सेतुमाधव अय्यर बनाम बाचा बीबी एवं अन्य** के मामले में मद्रास उच्च न्यायालय की खंड पीठ के फैसले का हवाला दिया जो **ए. आई. आर. 1928 मैड 778** में इस प्रस्ताव पर रिपोर्ट किया गया कि याचिकाकर्ताओं को केवल यह पता लगाने में उचित सावधानी बरतने की आवश्यकता थी कि क्या हस्तांतरणकर्ता के पास मुकदमे की भूमि को स्थानांतरित करने की शक्ति थी।और उस विश्वास पर कार्य करते हुए और यह पाते हुए कि उसका विक्रेता कई वर्षों से संपत्ति के निर्बाध कब्जे में था, एक हस्तांतरण प्राप्त करता है, ऐसा मामला धारा 41 की शर्तों द्वारा भी अंतर्गत भी आ सकता है क्योंकि माननीय खंड पीठ ने अभिनिर्धारित किया कि धारा 41 द्वारा निर्धारित उचित देखभाल में केवल यह देखने के लिए उचित देखभाल का संदर्भ होना चाहिए कि क्या उन शर्तों के तहत हस्तांतरण की शक्ति दी गई है या नहीं जिनके तहत प्रत्यक्ष स्वामित्व स्वयं गठित किया गया है। संयुक्त मालिक होने के नाते, याचिकाकर्ताओं के विक्रेताओं के स्वामित्व पर कोई संदेह नहीं था और इस तरह के हस्तांतरण से याचिकाकर्ताओं के पक्ष में अधिकार अर्जित हुए हैं और उनकी खरीद और कब्जे की रक्षा की जानी चाहिए क्योंकि वे 20 वर्षों से अधिक समय से कब्जे में है । श्री

सिंह ने इसके बाद माननीय उच्चतम न्यायालय के **बैंगलोर विकास प्राधिकरण बनाम एन. नंजप्पा एवं अन्य** के फैसले का उल्लेख किया जिसमे संहिता के आदेश 21 नियम 97,99 और 101 के दायरे पर **(2022) 18 एस. सी. सी. 156** में रिपोर्ट किया गया है बैंगलोर विकास प्राधिकरण बनाम एन. नंजप्पा का मामला जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि संहिता के आदेश 21 नियम 97 या नियम 99 के तहत आवेदन/बाधा पर विचार करते समय निष्पादन अदालत द्वारा आपत्ति पर निर्णय लेने की आवश्यकता है और निष्पादन कार्यवाही मे पक्षकार बनाने/ बाधा आवेदन के लिए आक्षेपकर्ता द्वारा दायर आवेदन को खारिज करते हुए निष्पादन अदालत का आदेश को गलत माना है। .इस प्रकार, श्री सिंह ने प्रस्तुत किया कि आक्षेपित आदेश कानून की नजर में न्यायोचित नहीं है क्योंकि याचिकाकर्ताओं ने सही मालिक से भूमि खरीदी है और आक्षेपित भूमि में याचिकाकर्ताओं का हिस्सा उनके हस्तांतरणकर्ता के हिस्से से काटा जाना चाहिए था और इस कारण से, आक्षेपित आदेश को रद्द करने की आवश्यकता है।

05. प्रतिवादी संख्या 1 की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री के. एन. चौबे ने *दृढ़ता* से तर्क दिया कि वर्तमान याचिका में कोई योग्यता नहीं है और इसे शुरुआत मे ही खारिज करने की आवश्यकता है। श्री चौबे ने प्रारंभ में ही कहा कि अधिनियम की धारा 41 का वर्तमान मामले में कोई आवेदन नहीं है क्योंकि यह प्रत्यक्ष मालिक द्वारा स्थानांतरण नहीं था। बेशक, हस्तांतरण विभाजन मुकदमे के लंबित रहने के दौरान एक संयुक्त पारिवारिक संपत्ति में सह-हिस्सेदारों द्वारा किया गया था और यह अधिनियम की धारा 52 द्वारा प्रभावित होता है। एक वादलम्बित हस्तांतरिती डिक्री के निष्पादन पर कोई आपत्ति नहीं रख सकता है। संहिता के आदेश 21 नियम 97 से 106 के तहत तीसरे पक्ष की डिक्री के निष्पादन के विरोध की अनुमति दी जा सकती है। उन नियमों का उद्देश्य किसी भी व्यक्ति द्वारा दिए गए हर प्रकार के प्रतिरोध या बाधाओं से निपटना है। हालाँकि, यदि विरोध निर्णय देनदार के किसी वादलम्बित हस्तांतरिती द्वारा किया गया था, तो न्याय निर्णय का दायरा इस सीमित प्रश्न तक सिकुड़ जाएगा कि क्या वह ऐसा हस्तांतरिती है और उस बिंदु के संबंध में सकारात्मक निष्कर्ष पर निष्पादन न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करना होगा कि उसे संहिता के आदेश 21 के नियम 102 में निहित स्पष्ट भाषा को देखते हुए विरोध करने का कोई अधिकार नहीं है।

06. अपने निवेदन के समर्थन में, श्री चौबे ने **सिल्वरलाइन फोरम प्राइवेट लिमिटेड बनाम राजीव ट्रस्ट एवं अन्य** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के एक

निर्णय का उल्लेख किया जिसे **ए. आई. आर. 1998 एस. सी. 1754,** में दर्ज किया गया, जिसमें पैरा-10 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः

> ***"10.*** *यह सच है कि आदेश 21 की नियम 99 किसी भी व्यक्ति के लिए तब तक उपलब्ध नहीं है जब तक कि वह डिक्री धारक द्वारा अचल संपत्ति से बेदखल नहीं हो जाता है। नियम 101 में कहा गया है कि "नियम 97 या नियम 99 के तहत एक आवेदन पर कार्यवाही के लिए पक्षों के बीच उत्पन्न होने वाले सभी प्रश्नों" का निष्पादन न्यायालय द्वारा निर्धारित किया जाएगा, यदि ऐसे प्रश्न "आवेदन के निर्णय के लिए प्रासंगिक हैं"। इस प्रकार डिक्री का कोई तीसरा पक्ष जो प्रतिरोध की पेशकश करता है, नियम 101 के दायरे में आएगा यदि डिक्री के निष्पादन में उसके द्वारा किए गए प्रतिरोध या बाधा के परिणामस्वरूप कोई निर्णय लिया जाता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यदि विरोध निर्णय देनदार के किसी वादलम्बित हस्तांतरिती द्वारा किया गया था, तो निर्णय का दायरा इस सीमित प्रश्न तक सीमित हो जाएगा कि क्या वह ऐसा हस्तांतरिती है और इस निष्कर्ष पर उस बिंदु के संबंध में सकारात्मक निर्णय के निष्पादन न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करना होगा कि नियम 102 में निहित स्पष्ट भाषा को देखते हुए उसे विरोध करने का कोई अधिकार नहीं है। इस तरह के हस्तांतरिती को आगे की दलीलें उठाने से बाहर करना संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 52 में दिए गए हितकारी सिद्धांत पर आधारित है।*
>
> *जब कोई डिक्री धारक किसी डिक्री के निष्पादन के विरोध की शिकायत करता है तो उस पर निर्णय*

देना निष्पादन अदालत का दायित्व होता है। लेकिन न्यायनिर्णयन करते समय, न्यायालय केवल ऐसे प्रश्न का निर्धारण करने के लिए बाध्य है जो ऐसी शिकायत पर कार्यवाही के लिए पक्षों के बीच उत्पन्न हो सकता है और ऐसे प्रश्न शिकायत के न्यायनिर्णयन के लिए प्रासंगिक होने चाहिए।

"नियम 97 के तहत एक आवेदन पर कार्यवाही के लिए पक्षों के बीच उत्पन्न होने वाले सभी प्रश्न" शब्द केवल ऐसे प्रश्नों को शामिल करेंगे जो उन पक्षों के बीच निर्धारण के लिए कानूनी रूप से उत्पन्न होंगे। दूसरे शब्दों में, न्यायालय केवल इसलिए किसी प्रश्न का निर्धारण करने के लिए बाध्य नहीं है क्योंकि अवरोधक ने इसे उठाया है। जिन प्रश्नों को निष्पादित करने वाला न्यायालय नियम 101 के तहत निर्धारित करने के लिए बाध्य है, उनमें दो सहायक होने चाहिए। पहला यह है कि ऐसे प्रश्न पक्षों के बीच कानूनी रूप से उत्पन्न होने चाहिए थे, और दूसरा यह है कि ऐसे प्रश्न पक्षों के बीच विचार और निर्धारण के लिए प्रासंगिक होने चाहिए, उदाहरण के लिए यदि अवरोधक स्वीकार करता है कि वह वादकालीन हस्तांतरिती के द्वारा उठाए गए इस प्रश्न का निर्धारण करना आवश्यक नहीं है कि जब उसने संपत्ति खरीदी थी तो वह मुकदमेबाजी से अनजान था। इसी तरह, एक तीसरा पक्ष, जो एक डिक्री धारक द्वारा किसी समनुदेशिती को किए गए हस्तांतरण की वैधता पर सवाल उठाता है, यह दावा नहीं कर सकता है कि इसकी वैधता के बारे में सवाल निष्पादन कार्यवाही के दौरान तय किया जाना चाहिए। इसलिए, यह आवश्यक है कि अवरोधक या

अवरोधक द्वारा उठाए गए प्रश्न उसके और डिक्री-धारक के बीच कानूनी रूप से उत्पन्न होने चाहिए। संहिता के आदेश 21 नियम 97 (2) में परिकल्पित न्यायनिर्णयन प्रक्रिया में, निष्पादन न्यायालय यह तय कर सकता है कि किसी अवरोधक या अवरोधक द्वारा उठाया गया प्रश्न कानूनी रूप से पक्षों के बीच उत्पन्न होता है या नहीं। उक्त प्रश्न का उत्तर भी उप-धारा में विचार किए गए निर्णय का परिणाम होगा।

07. श्री चौबे ने माननीय उच्चतम न्यायालय के उपरोक्त निर्णय का उल्लेख करते हुए कहा कि संहिता के आदेश 21 नियम 97 से 106 के तहत कार्यवाही का दायरा बढ़ाया नहीं जा सकता है और एक वादलम्बित हस्तांतरिती निष्पादन कार्यवाही में बाधा नहीं डाल सकता है या डिक्री धारक को कब्जे के वितरण का विरोध नहीं कर सकता है। श्री चौबे ने बताया कि इस मामले में मुकदमा 1964 में शुरू हुआ था और लगभग 60 वर्षों से यह मामला लंबित है जिससे डिक्री धारक को डिक्री के बाद के मुकदमे से वंचित कर दिया गया है।श्री चौबे इसके बाद **धीरा मिश्रा उर्फधीरा देवी और अन्य बनाम मोहम्मद लाइक अहमद एवं अन्य (सिविल विविध(2019 का सं. 26)** के मामले में इस न्यायालय के फैसले को संदर्भित किया गया जिसपर **06.02.2024** को निर्णय लिया था , जिसमें इस न्यायालय ने **कोर्ट ऑफ वार्ड बनाम महाराजा कुमार रामपूत सिंह), (1871-72) 14 एम. आई. ए. 605** का मामला, जिसमे प्रिवी काउंसिल के अवलोकन को उद्धृत किया था जिसे **(1872) एस. सी. सी. ऑनलाइन पी. सी. 16** में दर्ज किया गया था जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि "भारत में एक वादी की कठिनाइयाँ तब शुरू होती हैं जब वह एक डिक्री प्राप्त कर लेता है" अभी भी सच है और डेढ़ सदी के बाद भी स्थिति में सुधार नहीं हुआ है।

08. श्री चौबे ने आगे कहा कि सह-भागीदारों द्वारा की गई बिक्री के लिए प्रतिवादी संख्या 1 की ओर से कभी भी कोई सहमति नहीं दी गई है और याचिकाकर्ता ऐसे दावे के आधार पर किसी भी अधिकार का दावा नहीं कर सकते थे। श्री चौबे ने आगे कहा कि याचिकाकर्ताओं को विद्वान निचली अदालत के समक्ष लंबित कार्यवाही के बारे में हमेशा से पता था और फिर भी, उन्होंने मुकदमे को खरीदा और अब वे इस अदालत द्वारा अपने गलत कार्य के लिए माफी चाहते हैं, जो कि बिल्कुल अनुज्ञेय नहीं है। श्री चौबे ने इसके

बाद कहा कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत शक्तियों का प्रयोग ऐसे मामले में नहीं किया जाना चाहिए जब आक्षेपित आदेश में कोई कमजोरी न हो। आक्षेपित आदेश एक सुविचारित और स्पष्ट आदेश है और यह गलत नहीं हो सकता है।ऐसी परिस्थितियों में इस न्यायालय के लिए इस मामले में हस्तक्षेप करने की गुंजाइश बहुत कम है। श्री चौबे ने **जय सिंह और अन्य बनाम दिल्ली नगर निगम और अन्य (2010) 9 एस. सी. सी. 385** मे रिपोर्ट किए गए मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले का उल्लेख किया जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अनुच्छेद 227 के तहत शक्तियों का प्रयोग " ए बुल इन चाईना शॉप" की तरह नहीं किया जाना चाहिए, ताकि अदालत या न्यायाधिकरण के निर्णय की सभी त्रुटियों को ठीक किया जा सके, जो इसके अधिकार क्षेत्र की सीमाओं के भीतर काम करते हैं। इस सुधारात्मक अधिकार क्षेत्र का प्रयोग उन मामलों में किया जा सकता है जहां कर्तव्य की गंभीर अवहेलना या कानून या न्याय के मौलिक सिद्धांतों के घोर दुरुपयोग में आदेश पारित किए गए हैं।यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि उच्च न्यायालय के पास भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत अपनी शक्तियों के दायरे और दायरे में जब भी, जहां भी पाया जाए, अन्याय तक पहुंचने की शक्ति है।श्री चौबे ने आगे कहा कि हालांकि याचिकाकर्ता इस अदालत से इस आधार पर सहानुभूति मांग रहे हैं कि उन्होंने 20-25 साल पहले संपत्ति खरीदी है और वह इनके कब्जे में हैं और इन्होंने पक्के घरों का निर्माण किया है, लेकिन उनके पक्ष में कोई भी सहानुभूति गलत होगी क्योंकि यह कानून के खिलाफ होगा। श्री चौबे ने आगे कहा कि कानूनी उक्ति *"ड्यूरा लेक्स सेड लेक्स"* जिसका अर्थ है "कानून कठिन है लेकिन यह कानून है", ऐसी स्थिति में आकर्षित होता है। इस प्रकार, श्री चौबेप्रस्तुत किया कि आक्षेपित आदेश में कोई दुर्बलता नहीं है और इसे बनाए रखने की आवश्यकता है।

09. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री चौबे, के साथ इस मुद्दे में बहस करते हुए प्रतिवादी नं. 2 के विद्वान अधिवक्ता श्री सुनील कुमार वर्मा, दृढ़ता से तर्क दिया कि आक्षेपित आदेश टिकाऊ नहीं है और इसे दरकिनार कर दिया जाना चाहिए। श्री वर्मा ने आगे कहा कि विद्वान निष्पादन न्यायालय ने इस मामले में उत्पन्न होने वाले कानून, औचित्य और समानता के प्रासंगिक और प्रासंगिक प्रश्नों पर तथ्यात्मक पृष्ठभूमि में विचार नहीं किया। यह मामला वादी के साथ-साथ प्रतिवादियों के हितों के संरक्षण और बचत से संबंधित है क्योंकि तीसरे पक्ष के पक्ष में भूमि का हस्तांतरण और तीसरे पक्ष के हितों को विद्वत निष्पादन अदालत द्वारा आक्षेपित आदेश पारित करके त्याग दिया गया है और

अस्वीकार कर दिया गया है।श्री वर्मा ने आगे दलील दिया कि विद्वान निष्पादन अदालत ने द्वितीय अपील संख्या 63/1976 में पारित 18 मई, 1984 के आदेश की प्रासंगिक और प्रबल प्रकृति को नजरअंदाज कर दिया क्योंकि इसका यह अर्थ नहीं लगाया जा सकता है कि आदेश पारित होने की तारीख तक केवल उन्हीं हस्तांतरिती को संरक्षित किया जाएगा। यह सामान्य प्रभाव का आदेश था कि वादी या प्रतिवादी द्वारा पहले से ही किसी तीसरे पक्ष को बेची गई किसी भी संपत्ति को उसके हस्तांतरणकर्ताओं के हिस्से में रखा जाना था। उक्त आदेश याचिकाकर्ताओं की याचिका खारिज होने की तारीख तक कानूनी रूप से लागू था। इसके अलावा, विद्वान निष्पादन ने 1976 की एस ए संख्या 63 में पारित दिनांक 22.04.1985 के बाद के आदेश को ध्यान में नहीं रखा, जिसमें यह निर्देश दिया गया था कि वादी/उत्तरदाताओं को भूखंड के बाद के समूह का आवंटन इस कारण से उचित था कि उन्होंने वाद भूमि का पर्याप्त हिस्सा बेच दिया है और उनके द्वारा हस्तांतरित भूमि उन्हें आवंटित की जानी चाहिए। यह भी आदेश दिया गया कि एक बार उन्हें भूखंड आवंटित हो जाने के बाद, अपीलार्थी संयुक्त स्टॉक में उपलब्ध भूमि पर अपने शेयरों की सीमा तक आवंटन के हकदार बन जाएंगे। श्री वर्मा ने याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा लिए गए तर्क को दोहराया कि प्रतिवादी संख्या 1 प्लॉट संख्या 636 (नया), के अंतर्गत आने वाली आक्षेपित संपत्ति के संबंध में 04.03.2020, 07.08.2020, 08.12.2020 और 04.07.2021 कुछ विक्रेताओं के पक्ष में पर बिक्री विलेख निष्पादित किए जिसे प्लॉट संख्या 481 (पुराना) और प्लॉट संख्या 668 (पुराना) से विभाजित किया गया है। पुराने प्लॉट संख्या 481 और 668 में से तीन प्लॉट 636, 637 और 638 निकले।अब, प्लॉट नं. 481 (पुराना) और प्लॉट नं. 668 (पुराना) प्रतिवादी संख्या 1 की माता के हिस्से के लिए आवंटित किया गया था और अंतिम डिक्री तैयार करने और प्रतिवादी संख्या 1 की माँ के पक्ष में हिस्से के आवंटन के बावजूद उन्होंने प्लॉट संख्या 636 (नया) से संबंधित बिक्री विलेखों को अलग करने और निष्पादित करने का विकल्प चुना । जो पुराना प्लॉट संख्या 481 और 668 विभाजित किया गया है।श्री वर्मा ने आगे कहा कि दोनों सह-भागीदारों के खरीदार/हस्तांतरिती , प्रतिवादी संख्या 1 और 2 ने विषय भूमि पर कब्जा कर लिया है और इससे पता चलता है कि पक्षों को बिना किसी आरक्षण के उनके सह-हिस्सेदार की भूमि हस्तांतरित कर दी गई है। श्री वर्मा ने आगे कहा कि विद्वान अधिवक्ता आयुक्त ने 1976 की द्वितीय अपील संख्या 63 में अपने दिनांक 22.04.1985 के आदेश के तहत पारित इस अदालत के निर्देशों का पालन नहीं किया क्योंकि अधिवक्ता आयुक्त ने दोनों पक्षों के महत्वपूर्ण संपत्ति हित की रक्षा करने के लिए

प्लॉट संख्या 1, 24, 51, 54 और 56 को दक्षिण से उत्तर तक पक्षों के बीच समान पैमाने पर विभाजित करना शुरू नहीं किया था। केवल प्लॉट संख्या 26 को पक्षों के बीच विभाजित किया गया है। प्लॉट संख्या 54,56 और 24 को पूरी तरह से प्रतिवादी संख्या 1 के हिस्से के लिए आवंटित किया गया था जबकि प्लॉट संख्या 1 और 51 प्रतिवादी संख्या 2 के हिस्से के लिए आवंटित किए गए थे। इस प्रकार, श्री वर्मा ने प्रस्तुत किया कि इस न्यायालय द्वारा 1976 की द्वितीय अपील संख्या 63 में पारित दिनांक 22.04.1985 के आदेश का पूरी तरह से गैर-अनुपालन किया गया है, जिसमें भूखंड संख्या 1,24,51,54 और 56 को दक्षिण से उत्तर तक नए सिरे से हटा दिया गया है, जिससे प्रतिवादी संख्या 2 के महत्वपूर्ण हित पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है और विद्वान अवर-न्यायाधीश -**I**, पूर्वी मुज़फ़्फ़रपुर ने वादी/प्रतिवादी संख्या 2 की आपत्ति को नजर अंदाज कर दिया है और उक्त रिपोर्ट के आलोक में वादी/प्रतिवादी 2 की आपत्ति को अस्वीकार करते हुए आदेश दिनांक 29.04.1999/01.05.1999 और विद्वान अधिवक्ता आयुक्त की 03.09.1996 की रिपोर्ट की पुष्टि की है । 2007 के निष्पादन मामला संख्या 1 में दिनांक 16.08.2018 आदेश पारित करते समय विद्वान निष्पादन अदालत द्वारा इस तथ्य पर भी विचार नहीं किया गया है। इस प्रकार, श्री वर्मा ने प्रस्तुत किया कि विद्वान निष्पादन न्यायालय के आदेश को कायम नहीं रखा जा सकता है और इसे रद्द कर दिया जाना चाहिए।

10. मैंने पक्षों के प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतिकरण पर गहन विचार किया है और अभिलेख का अवलोकन किया है। प्रासंगिक कानूनी प्रावधानों को उद्धृत करना फायदेमंद होगा, जो संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 41 और 52 और संहिता के आदेश 21 नियम 97 से 106 हैं।संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 41 और 52 इस प्रकार हैः

> ***"41. प्रत्यक्ष मालिक द्वारा स्थानांतरण*** *—,जहां अचल संपत्ति में रुचि रखने वाले व्यक्तियों की सहमति, व्यक्त या निहित के साथ, एक व्यक्ति ऐसी संपत्ति का प्रत्यक्ष मालिक है और उसे प्रतिफल के लिए स्थानांतरित करता है, हस्तांतरण इस आधार पर उल्लंघन योग्य नहीं होगा कि हस्तांतरणकर्ता इसे बनाने के लिए अधिकृत नहीं थाःबशर्ते कि हस्तांतरिती ने यह सुनिश्चित करने के लिए उचित सावधानी बरतने के बाद कि हस्तांतरणकर्ता के पास स्थानांतरण करने की शक्ति थी, सद्भावना से कार्य किया है।*

52. संबंधित मुकदमे के लंबित रहने पर संपत्ति का हस्तांतरण *किसी न्यायालय में [जम्मू और कश्मीर राज्य को छोड़कर भारत की सीमाओं के भीतर] या ऐसी सीमाओं से परे स्थापित] [केन्द्रीय सरकार ***] द्वारा प्राधिकार प्राप्त किसी वाद या कार्यवाही के [लंबित रहने] के दौरान [जो मिलीभगत से संबंधित न हो और] जिसमें अचल संपत्ति का कोई अधिकार प्रत्यक्ष रूप से और विशिष्ट रूप से प्रश्नगत हो, उस संपत्ति को वाद या कार्यवाही के किसी भी पक्ष द्वारा इस प्रकार हस्तांतरित या अन्यथा निपटाया नहीं जा सकता जिससे उसमें पारित किसी डिक्री या आदेश के अधीन किसी अन्य पक्ष के अधिकारों पर प्रभाव पड़े, सिवाय न्यायालय के प्राधिकार के और ऐसी शर्तों के, जिन्हें वह लागू कर सकता है।*

*[**स्पष्टीकरण**।—इस धारा के प्रयोजनों के लिए, किसी वाद या कार्यवाही की लंबितता को सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय में वादपत्र प्रस्तुत किए जाने या कार्यवाही की स्थापना की तारीख से शुरू माना जाएगा, और तब तक जारी रहेगा जब तक कि वाद या कार्यवाही का अंतिम डिक्री या आदेश द्वारा निपटारा नहीं किया जाता है और ऐसी डिक्री या आदेश का पूर्ण संतुष्टि या निर्वहन प्राप्त नहीं हो जाता है, या उस समय लागू किसी कानून द्वारा उसके निष्पादन के लिए निर्धारित किसी सीमा की अवधि की समाप्ति के कारण अप्राप्य हो जाता है।]*

संहिता के आदेश 21 नियम 97 से 106 तक निम्नानुसार हैः

"97. अचल संपत्ति पर कब्जा करने के लिए प्रतिरोध या बाधा *(1) जहां अचल संपत्ति के कब्जे के लिए डिक्री के धारक या डिक्री के निष्पादन में बेची गई ऐसी किसी संपत्ति के खरीदार का किसी व्यक्ति द्वारा संपत्ति का कब्जा प्राप्त करने में विरोध किया जाता है या बाधा डाली जाती है, तो वह ऐसे प्रतिरोध या बाधा की शिकायत करते हुए अदालत में आवेदन कर सकता है।*

(2) जहां उप-नियम (1) के तहत कोई आवेदन किया जाता है, वहां न्यायालय इसमें निहित प्रावधानों के अनुसार आवेदन पर निर्णय लेने के लिए आगे बढ़ेगा।

98. निर्णय लेने के बाद आदेश। *(1) नियम 101 में निर्दिष्ट प्रश्नों का निर्धारण, न्यायालय, ऐसे निर्धारण के अनुसार और उपनियम (2) के प्रावधानों के अधीन रहते हुए, -*

(क) आवेदन को अनुमति देने वाला आदेश दें और निर्देश दें कि आवेदक को संपत्ति का कब्जा दिया जाए या आवेदन को खारिज कर दिया जाए; या

(ख) ऐसा अन्य आदेश पारित करें जो मामले की परिस्थितियों में वह उचित समझे।

(2) जहां, इस तरह के निर्धारण पर, न्यायालय का समाधान हो जाता है कि विरोध या बाधा निर्णय-देनदार द्वारा या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उसके उकसावे पर या उसकी ओर से, या किसी हस्तांतरिती द्वारा बिना किसी उचित कारण के की गई थी, जहां ऐसा हस्तांतरण वाद या निष्पादन कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान किया गया था, तो यह निर्देश देगा कि आवेदक को संपत्ति का कब्जा दिलाया जाए, और जहां आवेदक का अभी भी विरोध किया जाता है या कब्जा प्राप्त करने में बाधा डाला जाता है, तो न्यायालय, आवेदक के कहने पर, निर्णय-देनदार, या उसकी ओर से या उसकी ओर से कार्य करने वाले किसी भी व्यक्ति को, सिविल जेल में एक अवधि के लिए हिरासत में रखे जाने, जो तीस दिनों तक बढ़ सकता है का आदेश दे सकता है।

99. डिक्री धारक या खरीदार द्वारा बेदखल करना ---*(1) जहां निर्णय देनदार के अलावा किसी अन्य व्यक्ति को ऐसी संपत्ति के कब्जे के लिए डिक्री के धारक द्वारा अचल संपत्ति से बेदखल किया जाता है या जहां ऐसी संपत्ति को डिक्री के निष्पादन में*

बेचा गया है, तो खरीदार द्वारा, वह ऐसे बेदखल होने की शिकायत करते हुए अदालत में आवेदन कर सकता है।

(2) जहाँ ऐसा कोई आवेदन किया जाता है, वहाँ न्यायालय यहाँ निहित प्रावधानों के अनुसार आवेदन पर निर्णय लेने के लिए आगे बढ़ेगा।

100. विस्थापन की शिकायत आवेदन पर आदेश पारित किया जाएगा --- *नियम 101 में निर्दिष्ट प्रश्नों का निर्धारण, न्यायालय, ऐसे निर्धारण के अनुसार, -*

> *(क) आवेदन को अनुमति देने वाला आदेश दें और निर्देश दें कि आवेदक को संपत्ति के कब्जे में दिया जाए या आवेदन को खारिज कर दिया जाए; या*
>
> *(ख) ऐसा अन्य आदेश पारित करें जो मामले की परिस्थितियों में वह उचित समझे।*

101. निर्धारित किया जाने वाला प्रश्न*।—नियम 97 या नियम 99 के तहत एक आवेदन पर कार्यवाही के लिए पक्षों या उनके प्रतिनिधियों के बीच उत्पन्न होने वाले और आवेदन के निर्णय से संबंधित सभी प्रश्न (संपत्ति में अधिकार, स्वामित्व या हित से संबंधित प्रश्नों सहित), आवेदन से निपटने वाले न्यायालय द्वारा निर्धारित किए जाएंगे, न कि एक अलग मुकदमे द्वारा और इस उद्देश्य के लिए, न्यायालय, उस समय लागू किसी अन्य कानून में इसके विपरीत कुछ भी होने के बावजूद, ऐसे प्रश्नों पर निर्णय लेने के लिए अधिकार क्षेत्र में समझा जाएगा।*

102. वादलम्बित हस्तांतरिती पर लागू नहीं होने वाले नियम *— नियम 98 और 100 में कुछ भी उस व्यक्ति द्वारा अचल संपत्ति के कब्जे के लिए डिक्री के निष्पादन में प्रतिरोध या बाधा पर लागू नहीं होगा, जिसे निर्णय-देनदार ने उस मुकदमे की*

स्थापना के बाद संपत्ति हस्तांतरित की है जिसमें डिक्री पारित की गई थी या ऐसे किसी व्यक्ति को बेदखल किया गया हो ।

स्पष्टीकरण-—इस नियम में, "हस्तांतरण" में कानून के संचालन द्वारा हस्तांतरण शामिल है।

103. आदेशों को फरमानों के रूप में माना जाना चाहिए— *जहां नियम 98 या नियम 100 के तहत किसी भी आवेदन पर निर्णय लिया गया है वहाँ, उस पर दिए गए अपील के समान शर्तों के अधीन या अन्यथा के संबंध में वही बल होगा जैसे कि यह एक डिक्री थी।*

104. नियम 101 या नियम 103 के तहत आदेश लंबित मुकदमे के परिणाम के अधीन होंगे *–नियम 101 या नियम 103 के तहत किया गया प्रत्येक आदेश किसी भी मुकदमे के परिणाम के अधीन होगा जो उस कार्यवाही के शुरू होने की तारीख को लंबित हो सकता है जिसमें ऐसा आदेश दिया जाता है, यदि ऐसे मुकदमे में उस पक्ष ने जिसके खिलाफ नियम 101 या नियम 103 के तहत आदेश दिया गया है, एक अधिकार स्थापित करने का प्रयास किया है जिसका वह संपत्ति के वर्तमान कब्जे का दावा करता है।*

105. आवेदन की सुनवाई।—*(1) न्यायालय ने, जिसके समक्ष इस आदेश के पूर्वगामी नियमों में से किसी के तहत कोई आवेदन लंबित है, वह आवेदन की सुनवाई के लिए एक दिन तय कर सकता है।*

(2) जहां नियत दिन या किसी अन्य दिन जिस पर सुनवाई स्थगित की जा सकती है, आवेदक तब उपस्थित नहीं होता है जब मामला सुनवाई के लिए बुलाया जाता है, तो न्यायालय आदेश दे सकता है कि आवेदन को खारिज कर दिया जाए।

(3) जहाँ आवेदक उपस्थित होता है और विरोधी पक्ष जिसे न्यायालय द्वारा नोटिस जारी किया गया है, उपस्थित नहीं होता है, वहाँ न्यायालय आवेदन को एकतरफा सुन सकता है और ऐसा आदेश पारित कर सकता है जो वह उचित समझे।

स्पष्टीकरण-—उपनियम (1) में निर्दिष्ट आवेदन में नियम 58 के तहत किया गया दावा या आपत्ति शामिल है।

***106. एकतरफा पारित आदेशों को रद्द करना आदि** — (1) आवेदक, जिसके खिलाफ उप-नियम (2) नियम 105 के तहत आदेश दिया गया है या विरोधी पक्ष जिसके खिलाफ उस नियम के उप-नियम (3) के तहत या नियम 23 के उप-नियम (1) के तहत एकतरफा आदेश पारित किया गया है, आदेश को रद्द करने के लिए अदालत में आवेदन कर सकता है, और जिसे सुनवाई के लिए आवेदन बुलाया गया था यदि वह अदालत को संतुष्ट करता है कि उसके गैर-उपस्थिति के लिए पर्याप्त कारण था, तो न्यायालय आदेश को लागत या अन्यथा जैसी वह उचित समझे, ऐसी शर्तों पर रद्द कर देगा और आवेदन की आगे की सुनवाई के लिए एक दिन निर्धारित करेगा।*

(2) उप-नियम (1) के तहत आवेदन पर कोई आदेश तब तक नहीं दिया जाएगा जब तक कि आवेदन की सूचना दूसरे पक्ष को नहीं दी गई हो।

(3) उप-नियम (1) के तहत आवेदन आदेश की तारीख से तीस दिनों के भीतर किया जाएगा, या जहां, एक तरफा आदेश के मामले में, नोटिस विधिवत रूप से तामील नहीं किया गया था, उस तारीख से तीस दिनों के भीतर जब आवेदक को आदेश की जानकारी थी।

11. अब, अधिनियम की धारा 41 के सरल अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि याचिकाकर्ताओं के प्रत्यक्ष मालिक के हस्तांतरिती होने का दावा दिए गए तथ्यों और परिस्थितियों में पूरी तरह से गलत है। यह डिक्री धारक या किसी भी पक्ष के मामले में

नहीं है कि याचिकाकर्ता के पक्ष में संपत्ति का हस्तांतरण इस कारण से अमान्य है कि हस्तांतरणकर्ता को कोई शक्ति नहीं मिली थी। याचिकाकर्ताओं के दावे पर इस आधार पर हमला किया गया है कि उन्होंने संपत्ति खरीदी है जबकि मुकदमा लंबित है और इस प्रकार, यह अधिनियम की धारा 52 द्वारा प्रभावित है। इसलिए, प्रत्यक्ष मालिक से खरीदारों के दावे के संबंध में याचिकाकर्ताओं के लिए विद्वान वकील द्वारा उद्धृत सभी निर्णय गलत हैं। 1976 की द्वितीय अपील संख्या 63 में पारित इस न्यायालय के आदेश याचिकाकर्ताओं की मदद के लिए के रूप में नहीं आएंगे क्योंकि आदेश उन हस्तांतरीतियों की रक्षा करते थे जो आदेश पारित होने की तारीख को अस्तित्व में थे, न कि बाद के हस्तांतरितों को , जैसा कि प्रतिवादी संख्या 2. के विद्वान अधिवक्ता ने दावा किया है। यह तथ्य बाद की घटनाओं से स्पष्ट हो जाता है, द्वितीय अपील में पक्षों के बीच हुए विभाजन में हस्तक्षेप नहीं किया गया है। इसके बजाय इस न्यायालय ने कहा कि दोनों पक्षों के हितों को संतुष्ट करने के लिए याचिकाकर्ता आयुक्त की रिपोर्ट में *पट्टीबंदी* को बनाए रखा जाएगा, जिसे विद्वान जिला न्यायाधीश, मुज़फ़्फ़रपुर के समक्ष प्रस्तुत किया गया था, जिसमें संशोधन किया गया था कि भूखंड संख्या 1, 24, 26, 54 और 56 का एक नया विभाजन को क्रमशः दक्षिण से उत्तर तक बनाया जाना था और पक्षों को आवंटित क्षेत्र और सघनता को बनाए रखा जाना था। इसलिए, द्वितीय अपील में अंतिम डिक्री के पारित होने के साथ ही पक्षों के हिस्से और इसके सीमांकन को पहले ही तय कर दिया गया था, जो कि भूखंड संख्या 1, 24, 26, 54 और 56 के नए विभाजन को दक्षिण से उत्तर तक बनाया जाएगा जो की पहली अपीलीय अदालत का केवल एक संशोधित डिक्री था। यह तथ्य महत्वपूर्ण है क्योंकि पक्षकार हमेशा से अपने-अपने हिस्सों के बारे में जानते रहे हैं और इस तथ्य को जानने के बावजूद, प्रतिवादी संख्या 2 ने प्रतिवादी संख्या 1 के हिस्से में आने वाली संपत्ति को दंड से मुक्त करते हुए अलग करना जारी रखा। ।यहाँ यह उल्लेख करना उचित है कि द्वितीय अपील में अंतिम आदेश 22.04.1985 पर पारित किए गए थे। तो, प्रतिवादी संख्या 2 यह याचिका नहीं ले सकते किपक्षों के हिस्सा तब तय नहीं हुआ था जब द्वितीय अपील में इस न्यायालय के फैसले ने यह बहुत स्पष्ट कर दिया कि प्लॉट संख्या 1, 24, 26, 54 और 56 के नए विभाजन को छोड़कर अधिवक्ता आयुक्त की पट्टीबंदी रिपोर्ट को बनाए रखा जाएगा जो क्रमशः दक्षिण से उत्तर तक बनाया जाएगा और पक्षों को आवंटित क्षेत्र और सघनता को बनाए रखा जाएगा। यहाँ यह भी उल्लेख करना उचित है कि पहले भूखंड को विभाजित करने में पट्टीबंदी संख्या 1, 24, 26, 54 और 56 पूर्व से पश्चिम तक थे और दक्षिण से उत्तर तक विभाजन करते समय उस विभाजन का समान क्षेत्र पक्षों को

आवंटित किया जाना था। इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि यह प्रतिवादी संख्या 2 का कृत्य है जिसने याचिकाकर्ताओं को दयनीय स्थिति में डाल दिया है।उपरोक्त कारण से, न तो प्रतिवादी संख्या 2 और न ही याचिकाकर्ता यह दावा कर सकते हैं कि याचिकाकर्ताओं के पक्ष में प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा बेची गई भूमि को प्रतिवादी संख्या 2 के हिस्से में आवंटित किया जाए।

12. मुझे याचिकाकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता के द्वारा दिए गए तर्क में भी कोई योग्यता नहीं मिलती है कि याचिकाकर्ताओं को संहिता के आदेश 21 नियम 97 के तहत सुनवाई का उचित अवसर नहीं मिल रहा है, क्योंकि संहिता के आदेश 21 के नियम 97 से 101 वादलम्बित हस्तांतरिती पर बिल्कुल लागू नहीं होते हैं। इस कारण से, **बैंगलोर विकास प्राधिकरण** (ऊपर) पर निर्भरतावर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के लिए प्रासंगिक नहीं है। इसलिए,याचिकाकर्ताओं वादलम्बित हस्तांतरिती के पास निष्पादन कार्यवाही का विरोध करने या आपत्ति करने का कोई अधिकार नहीं है। एक बार जब यह स्वीकार कर लिया जाता है कि निष्पादन कार्यवाही का विरोध करने वाला एक वादलम्बित हस्तांतरिती व्यक्ति है, तो आपत्ति करने वाले द्वारा उठाए गए इस प्रश्न का निर्धारण करना आवश्यक नहीं है कि जब उसने संपत्ति खरीदी थी तो वह मुकदमेबाजी से अनजान था।

13. मुझे श्री चौबे के दलील में यह भी योग्यता मिलती है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत इस न्यायालय का दायरा और अधिकार क्षेत्र सीमित है और इसका उपयोग संयम से किया जाना चाहिए और इसका उपयोग द्वारा अपने अधिकार क्षेत्र की सीमाओं के अंदर काम करने न्यायालय या न्यायाधिकरण की सभी त्रुटियों को सुधारने के लिए नहीं किया जा सकता है। तत्काल मामले में, विद्वान अवर न्यायाधीश द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में अधिकार क्षेत्र की कोई त्रुटियां प्रतीत नहीं होती है। यह एक अच्छी तरह से चर्चा और तर्कपूर्ण आदेश है और याचिकाकर्ताओं के प्रत्येक तर्क को विद्वान निष्पादन अदालत द्वारा दर्ज और अस्वीकार कर दिया गया है। जब तक अधिकार क्षेत्र की कोई कमी या अधिकता या अधिकारिता की कमी नहीं है, तब तक इस न्यायालय के लिए ऐसे आदेशों में हस्तक्षेप करने का कोई अवसर नहीं है ताकि यह कहा जा सके कि न्यायालय 'चीन की दुकान में एक बैल' की तरह काम कर रहा है।

14. यहाँ पूर्व मे की गई चर्चा के आलोक में, मुझे 2007 के निष्पादन मामले संख्या 1 में पूर्वी मुज़फ़्फ़रपुर के विद्वान अवर-न्यायाधीश-**I** द्वारा पारित दिनांक

16.08.2018 के आक्षेपित आदेश में अधिकार क्षेत्र की कोई त्रुटियां नहीं मिलती है और इसलिए, आक्षेपित आदेश किसी भी दुर्बलता से ग्रस्त नहीं है और इसलिए, इसकी पुष्टि की जाती है।

15. परिणामस्वरूप, वर्तमान सिविल विविध याचिका खारिज हो जाती है।

16. हालांकि, यह स्पष्ट किया जाता है कि याचिकाकर्ता हमेशा अपने विक्रेता के खिलाफ अपने दावे के लिए कानून का सहारा ले सकते हैं।

(अरुण कुमार झा, न्यायमूर्ति)

आशीष/-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।